भगवान बुद्ध

लेखक
यशपाल शर्मा
योगेन्द्र शर्मा

१९५०
साहित्य-प्रकाशन
मालीवाड़ा, दिल्ली

: १ :

भगवान बुद्ध

लगभग ढाई हजार वर्ष पुरानी बात है कि भारत में कपिलवस्तु नाम का एक राज्य था। इस राज्य की राजधानी का नाम भी कपिलवस्तु था। कहते हैं किसी समय इस पुण्य स्थान पर भारत-विख्यात ऋषि कपिल तपस्या किया करते थे। उन्हीं के नाम पर इस नगरी का नाम कपिलवस्तु पड़ा।

कपिलवस्तु एक पहाड़ी नदी के किनारे पर बसा था। इस नदी का नाम रोहिणी था। यह नगर उसी समय अपनी शान का निराला ही नगर था।

आज उस नगर का कहीं पता नहीं है। यह नगर अयोध्या से पच्चीस मील उत्तर-पूर्व दिशा में था। आज उस नगर का कोई चिन्ह शेष नहीं है।

कपिलवस्तु राज्य में राजा का चुनाव प्रजा करती

थी। जो व्यक्ति सबसे योग्य और गुणवान समझा जाता था उसे ही वहाँ का राजा बनाया जाता था। राज्य का संचालन भी प्रजा की इच्छा के अनुसार किया जाता था।

राज्य के लोगों का व्यवसाय अधिकतर खेती था। कुछ लोग पशु-पालन का कार्य करते थे। राज्य धन-धान्य से पूर्ण था। इस राज्य के राजा शाक्यवंशीय थे। उन दिनों यह पर्याप्त शक्तिशाली राज्य था।

जिस समय की हम यह कथा लिख रहे हैं, उस समय राजा शुद्धोदन कपिलवस्तु में राज्य करते थे।

राजा शुद्धोदन की दो रानियाँ थीं। एक का नाम मायावती था और दूसरी का गौमती। इनमें मायावती बड़ी थी और गौमती छोटी। दोनों पत्नियों में परस्पर बहुत स्नेह था। दोनों ही दो सगी बहनों के समान रहती थीं।

वैशाख पूर्णिमा के दिन रानी मयावती के गर्भ से एक बालक ने जन्म लिया। बालक बहुत सुन्दर और हृष्ट-पुष्ट था। उसके जन्म पर राज्य में हर्ष की लहर दौड़ गई। बच्चा आकृति से ही बहुत होनहार प्रतीत होता था। जिसने भी उसे देखा उसके उज्ज्वल भविष्य

की कामना की ।

इस बच्चे का नाम सिद्धार्थ रखा गया । इस नाम को रख कर महाराज शुद्धोदन ने कामना की कि यह बच्चा जो कार्य भी करेगा उसमें इसे सिद्धि प्राप्त होगी ।

महाराज शुद्धोदन ने इस शुभ अवसर पर अपने राज्य में स्थान-स्थान पर यज्ञ कराए और ब्राह्मणों तथा याचकों को दान देने की व्यवस्था की । अनेकों उत्सव मनाए गए । इन उत्सवों में प्रजा ने बालक की दीर्घ आयु के लिए देवी-देवताओं के समक्ष प्रार्थना की ।

सिद्धार्थ के जन्म से सात दिन पश्चात् अकस्मात् बच्चे की माता रानी महामाया का स्वर्गवास हो गया । मायावती ने मृत्यु के समय सिद्धार्थ को गौमती के हाथों में सौंपकर कहा, "बहन ! अब तुम्हीं इस बच्चे की माता हो । इसका लालन-पालन तुम्हें ही करना है ।"

गौमती ने नेत्रों से अश्रु बरसाते हुए सिद्धार्थ को उठाकर छाती से लगा लिया और आश्वासनपूर्ण शब्दों में बोली, "बहन ! सिद्धार्थ मेरे हृदय का टुकड़ा है । इसे मैं अपने प्राणों से भी अधिक मूल्यवान समझूंगी ।"

की कामना की।

इस बच्चे का नाम सिद्धार्थ रखा गया। इस नाम को रख कर महाराज शुद्धोदन ने कामना की कि यह बच्चा जो कार्य भी करेगा उसमें इसे सिद्धि प्राप्त होगी।

महाराज शुद्धोदन ने इस शुभ अवसर पर अपने राज्य में स्थान-स्थान पर यज्ञ कराए और ब्राह्मणों तथा याचकों को दान देने की व्यवस्था की। अनेकों उत्सव मनाए गए। इन उत्सवों में प्रजा ने बालक की दीर्घ आयु के लिए देवी-देवताओं के समक्ष प्रार्थना की।

सिद्धार्थ के जन्म से सात दिन पश्चात् अकस्मात् बच्चे की माता रानी महामाया का स्वर्गवास हो गया। मायावती ने मृत्यु के समय सिद्धार्थ को गौमती के हाथों में सौंपकर कहा, "बहन ! अब तुम्हीं इस बच्चे की माता हो। इसका लालन-पालन तुम्हें ही करना है।"

गौमती ने नेत्रों से अश्रु बरसाते हुए सिद्धार्थ को उठाकर छाती से लगा लिया और आश्वासनपूर्ण शब्दों में बोलीं, "बहन ! सिद्धार्थ मेरे हृदय का टुकड़ा है। इसे मैं अपने प्राणों से भी अधिक मूल्यवान समझूंगी।"

यह कहकर वह फूट-फूट कर रो पड़ी। मायावती ने संतोष की श्वास ली और शान्तिपूर्वक प्राण-त्याग किया।

गौमतीदेवी ने अपने वचनों को निभाया और सिद्धार्थ के लालन-पालन में अपने आपको रत कर दिया। सिद्धार्थ गौमती की आँखों का तारा था। उसे वह एक क्षण के लिए भी अपनी आँखों से ओझल नहीं देख सकती थीं। उसका सारा समय उसी की देख-रेख में व्यतीत होता था। उन्हें सिद्धार्थ के पालन-पोषण के अतिरिक्त अन्य कोई कार्य ही नहीं था।

कपिलवस्तु नगर के चारों ओर बहुत घना वन था। उस वन में एक तपस्वी महात्मा का आश्रम था। वह उसी आश्रम में रहकर तपस्या किया करते थे।

महाराज शुद्धोदन ने एक उत्सव में उस महात्मा को आमंत्रित किया। महाराज ने उन्हें अपने पुत्र सिद्धार्थ को दिखाया तो वह उसे देखकर आश्चर्य-चकित रह गए। उन्होंने बड़े ध्यान से बच्चे को देखा। उनके चेहरे पर प्रसन्नता की रेखाएं खिच गई।

महाराज बोले, "महात्मन ! बच्चे को आशीर्वाद देने की कृपा करें। आपके आशीर्वाद से यह बच्चा

अपने जीवन में ख्याति प्राप्त करेगा।"

महात्मा बच्चे को गोद में लेकर बोले, "महाराज! इस बच्चे को किसी के आशीर्वाद की अपेक्षा नहीं है। यह बच्चा अपने जीवन में महान् पद प्राप्त करेगा और लाखों व्यक्ति इसके समक्ष आशीर्वाद प्राप्त करने के लिए करबद्ध खड़े रहेंगे।"

महाराज शुद्धोदन को महात्मा की बात सुनकर हर्ष भी हुआ और आश्चर्य भी। उन्होंने पूछा, "महाराज! आप त्रिकालदर्शी हैं। कृपया विस्तारपूर्वक बताने की कृपा करें कि यह बच्चा अपने जीवन में किस प्रकार की महानता प्राप्त करेगा।"

महात्मा बोले, "राजन्! यह बच्चा एक महान् व्यक्ति बनेगा। अभी यह बात स्पष्ट नहीं है कि यह किस दिशा में अग्रसर होगा। यदि यह महात्मा बना तो संसार को सच्चा धर्म दिखाएगा। मानव मात्र का कल्याण करेगा। इसकी विश्व में ख्याति होगी। देश-देशान्तरों में इसका नाम फैलेगा। करोड़ों व्यक्ति इसके अनुयायी बनेंगे।

यदि यह राज्य-पथ पर अग्रसर हुआ तो एक महान् विजेता बनेगा। चक्रवर्ती राजा होगा। सम्पूर्ण

भारत में ही नहीं वरन् दूर देशों तक इसके राज्य का विस्तार होगा। इसके समक्ष कोई राजा सिर नहीं उठा सकेगा।"

यह समाचार प्राप्त कर राजा शुद्धोदन और राज्य के मंत्रियों को अपार हर्ष हुआ। इस समाचार की प्रसन्नता में महोत्सव मनाया गया। परन्तु महाराज शुद्धोदन के मन में एक शंका ने घर कर लिया। उन्हें भय हुआ कि कहीं यदि सिद्धार्थ एक महान् राजा न बनकर महान् महात्मा बन गया तो क्या होगा?

महाराज शुद्धोदन ने अपने मनकी शंका को किसी पर व्यक्त नहीं किया। वह मन ही मन इस समस्या पर विचार करते रहे और सिद्धार्थ के चारों ओर ऐसे साधन जुटाने में संलग्न हो गए जिससे उसकी प्रकृति राज्य-कार्यों की ओर ही अग्रसर हो।

महाराज ने सिद्धार्थ को ऐसे महल में रखा जिसमें वीर पुरुषों के चित्र लगे रहते थे। धनुर्धर राम, सुदर्शन चक्रधारी कृष्ण, अर्जुन, भीष्मपितामह, दुष्यन्त इत्यादि के सुन्दर चित्र बनवाकर महल में लगाए गए। चारों ओर दीवारों पर शेर-चीतों के मुख और उनकी खालें [illegible]-काई गईं और उनके साथ चमचमाते हुए अस्त्र-शस्त्र

टाँगे गए। बालक भरत का सिंह का जबाड़ा चीरता हुआ चित्र सब चित्रों के बीच विशेषरूप से बनवाया गया। राम और कृष्ण के जीवन की कई झाँकियाँ प्रस्तुत की गई जिनमें उन्होने राक्षसों का संहार किया था।

महारानी गौमती से महाराज शुद्धोदन ने कहा, "रानी! तुम्हें अपने पुत्र को एक यशस्वी राजा बनाना है। इसके लिए तुम इसे वीर पुरषों की गाथाएँ सुनाया करो।"

गौमतीदेवी ने सिद्धार्थ को अनेकों वीर पुरुषों की गाथाएँ सुनाई परन्तु उन्होंने देखा कि सिद्धार्थ की उन में कोई रुचि नहीं थी। वह बच्चा हर समय अपने ही ध्यान में मग्न रहता था। उस पर बाहरी वातावरण का कोई प्रभाव नहीं पड़ता था। दीवारों पर लगे चित्रों इत्यादि की ओर वह कभी ध्यान से देखता भी नहीं था।

बालक के इस स्वभाव के विषय में गौमतीदेवी जब महाराज शुद्धोदन से जिक्र करती थीं तो वह कुछ उदास हो जाते थे। गौमतीदेवी महाराज की उदासीनता का कारण समझने में असमर्थ थी।

२

घायल हंस

सिद्धार्थ धीरे-धीरे बड़ा हुआ। वह स्वभाव का नम्र, पितृभक्त आज्ञापरायण, सदाचारी और सर्वप्रिय था। उसे जो भी देखता था उसकी ओर आकर्षित हो उठता था। वह सभी से विनम्र वाणी में बोलता था। सभी का आदर करता था। कभीकोई ऐसा शब्द उच्चारण नहीं करता था जिससे किसी के हृदय पर तनिक-सी भी ठेस लगे।

कपिलवस्तु राज्य में प्रतिवर्ष कृषि-उत्सव में राजा, मंत्री और प्रजा सब भाग लेते थे। दूर-दूर से लोग इस उत्सव में भाग लेने के लिए आते थे।

इस वर्ष सिद्धार्थ भी उस उत्सव को देखने गया। उसने देखा कि उत्सव में भाग लेने वाले पशुओं के साथ कृषक लोग बड़ी ही निर्दयता का व्यवहार करते

थे। उनके इस व्यवहार को देखकर सिद्धार्थ का हृदय रो उठा। उन्हें अपार कष्ट हुआ। उन्होंने अपने मन में कहा, "मनुष्य कितना निर्दय हो गया है। इसे अपने आराम और स्वार्थ के समक्ष किसी की चिन्ता नहीं। बेचारे बेज़बान जानवरों के साथ यह कितना निर्दयतापूर्ण व्यवहार करता है।"

सिद्धार्थ के नेत्रों में जल भर आया। वह उस दृश्य को देख न सके और चुपचाप उत्सव से उठकर बाहर चले आए। वह नेत्र बन्द करके एक वृक्ष के नीचे जाकर बैठ गए।

जब उत्सव समाप्त हुआ और महाराज शुद्धोदन को सिद्धार्थ अपने निकट बैठा न मिला तो उन्होंने सिद्धार्थ की खोज की। वह अपने मंत्रियों के साथ वहाँ से बाहर आकर इधर-उधर सिद्धार्थ को खोजने लगे। खोजते-खोजते जब वे लोग उस वृक्ष के निकट पहुँचे जिसके नीचे सिद्धार्थ बैठा था तो उसे देखकर वे आश्चर्यचकित रह गए।

महाराज ने आगे बढ़कर सिद्धार्थ को अपनी छाती से लगाकर पूछा, "बेटा! तुम इतने उदास क्यों हो? क्या किसी ने तुम्हें कुछ कहा है?"

का होगा।"

वृद्ध मन्त्री का यह सुझाव महाराज शुद्धोदन को भी पसंद आया। अन्य मन्त्रियों ने भी इस सुझाव की प्रशंसा की।

राजकुमार सिद्धार्थ और देवव्रत दरबार में एक-दूसरे से कुछ फासले पर खड़े हो गए। वृद्ध मन्त्री ने हंस को दोनों बच्चों के बीच में छोड़ दिया।

सर्वप्रथम देवव्रत को अवसर दिया गया कि वह हंस को पुकारकर अपने निकट बुलाए। देवव्रत ने हंस को पुकारा और और अपने निकट बुलाने का प्रयास किया, परन्तु हंस आगे न बढ़ा। वह देवव्रत की आवाज़ सुनकर भय से सहमकर सिमट-सा गया। उसके पर खड़े हो गए।

देवव्रत के पश्चात् सिद्धार्थ ने स्नेहपूर्ण दृष्टि से हंस की ओर देखा। उसने हंस को ज्योंही तनिक पुकारा त्योंही हंस लड़खड़ाता हुआ सिद्धार्थ की ओर बढ़ गया। वह आगे बढ़कर अपने प्राण-दाता की गोद में जा बैठा। इस दृश्य को देखकर समस्त दरबारी चकित रह गए।

वृद्ध मन्त्री ने कहा, "देवव्रत! हंस अपने प्राणरक्षक

बोला, " इस हंस को मैंने अपने तीर से घायल करके भूमि पर गिराया है। यह हंस मेरा है सिद्धार्थ! इसे मुझे दे दो।"

सिद्धार्थ क्रुद्ध दृष्टि से देवव्रत की ओर देखकर बोला, "देवव्रत! तूने इस हंस के प्राण लेने का प्रयास किया है और मैंने इसके प्राणों की रक्षा की है। इसलिए इस पर तेरा कोई अधिकार नहीं। यह हंस मेरा है। मैं इस हंस को तुझे नहीं दूंगा।"

इस बात को लेकर दोनों भाइयों में मतभेद पैदा हो गया। दोनों भाई न्याय के लिए महाराज शुद्धोदन के समक्ष गए।

महाराज शुद्धोदन ने दोनों बच्चों की अपने-अपने पक्ष में कही गई बातें सुनीं। जब वह निर्णय लेने में असमर्थ रहे तो उन्होंने अपने वृद्ध मन्त्री को बुलाकर उन्हें पूर्ण वृत्तांत सुनाकर निर्णय देने को कहा।

वृद्ध मन्त्री ने आगे बढ़ाकर हंस को अपने हाथ में ले लिया। वह बोले, 'बच्चो! तुम दोनों आगे बढ़कर खड़े होजाओ। मैं इस हंस को तुम दोनों के बीच में छोड़ दूंगा। तुम दोनों इस हंस को बारी-बारी से अपनी ओर बुलाना। हंस जिसके पास चला जायेगा, उसी

: ३ :

विवाह

सिद्धार्थ धीरे-धीरे युवावस्था को प्राप्त होने जा रहे थे। उनके मन में संसार के कष्टों को देखकर वैराग्य की भावना पैदा होती जा रही थी। वह सोचने लगे थे कि यह संसार दुःख सागर है। इसमें रहकर मनुष्य आराम से नहीं रह सकता। हर मनुष्य के पीछे-पीछे बुढ़ापा और मृत्यु दौड़े चले आ रहे हैं। मनुष्य इनसे भागकर छुटकारा प्राप्त नहीं कर सकता।

राजा शुद्धोदन अपने पुत्र सिद्धार्थ की प्रवृत्ति वैराग्य की ओर बढ़ती देखकर चिंतित रहते थे। उन्होंने सिद्धार्थ का मन विपरीत दिशा में मोड़ने के जो साधन जुटाए थे वे सिद्धार्थ की प्रवृत्तियों को न रोक सके। महाराज ने ऐसा प्रबन्ध किया कि जिससे सिद्धार्थ के सामने कोई दुखद घटना न घटे और कोई

को पहचान कर उसके पास चला गया। तुमने यदि इसके प्राणों की रक्षा की होती तो यह तुम्हारे पास आता। यह हंस तुम्हारा नहीं सिद्धार्थ का है। महाराज को हंस सिद्धार्थ को ही देना चाहिए।"

महाराज शुद्धोदन ने अपना निर्णय सिद्धार्थ के पक्ष में दिया। राज्य के मन्त्रियों ने महाराज के निर्णय की प्रशंसा की।

सिद्धार्थ हंस को लेकर अपने महल को चले गए। उन्होंने हंस का उपचार किया और वह पूर्ण स्वस्थ हो गया। जब वह तूर्ण स्वस्थ हो गया तो महाराज ने उसे मुक्त करके आकाश में उड़ा दिया।

दिन मेरी भी यही दशा बना देगा ?"

सिद्धार्थ की यह भोली बात सुनकर सारथी मुस्करा कर बोला, "राजकुमार ! जो व्यक्ति इस संसार में आया है वह एक दिन वृद्ध अवश्य होगा । वृद्धावस्था हर व्यक्ति को आती है और हर व्यक्ति मृत्यु को प्राप्त होता है ।"

राजकुमार सिद्धार्थ सोचने लगे कि मनुष्य यह जानते हुए भी कि उसे ऐसी दशा को प्राप्त होना है फिर भी कितने स्वार्थपूर्ण कार्य करता है ।

सिद्धार्थ का रथ आगे बढ़ता जा रहा था । वह कुछ दूर और आगे पहुँचे तो उन्होंने कुछ व्यक्तियों को एक अर्थी ले जाते देखा । सिद्धार्थ ने सारथी से पूछा, "ये लोग क्या ले जा रहे हैं सारथी ?"

सारथी बोला, "राजकुमार ! यह लोग किसी मृतक के शव को उठाकर ले जा रहे हैं । यह व्यक्ति मृत्यु को प्राप्त हो चुका है ।"

"ये लोग इसे कहां ले जा रहे है ?" सिद्धार्थ ने पूछा ।

"ये लोग इसे श्मशान भूमि में ले जाकर इसका दाहकर्म संस्कार करेंगे । मनुष्य की यही अन्तिम गति

कष्ट का दृश्य उसके सामने उपस्थित न हो। उनसे जो कोई व्यक्ति भेंट करे ऐसो कोई वात न करे जिससे उन्हें कष्ट हो।

एक वार सिद्धार्थ ने कपिलवस्तु नगर की सैर करने का विचार किया। उनके आगमन का समाचार प्राप्त कर नगर को भली प्रकार सजाया गया। स्थान-स्थान पर प्रजा-जनों ने राजकुमार का स्वागत किया। उन्होंने उनके गले में पुष्प-मालाएँ पहनाईं और उन पर पुष्पों की वर्षा की।

सिद्धार्थ ने देखा वाजार में एक कुवड़ा व्यक्ति जा रहा था। उसकी पीठ मुड़ी हुई थी और उसे चलने में वड़ा कष्ट हो रहा था। वह लाठी के सहारे वड़ी कठिनाई से चल रहा था। उसकी दशा को देखकर सिद्धार्थ ने अपने सारथी से पूछा, "यह व्यक्ति इस प्रकार झुककर क्यों चल रहा है?"

सारथी ने उत्तर दिया, "यह व्यक्ति वूढ़ा हो गया है राजकुमार! वुढ़ापे में मनुष्य की यही दशा होती है। शरीर दुर्वल हो जाता है। कमर मुड़ जाती है।"

यह सुनकर सिद्धार्थ चिन्ता-निमग्न हो गए। उन्होंने फिर पूछा, "सारथी! क्या यह वुढ़ापा किसी

दिन मेरी भी यही दशा बना देगा ?"

सिद्धार्थ की यह भोली बात सुनकर सारथी मुस्करा कर बोला, "राजकुमार ! जो व्यक्ति इस संसार में आया है वह एक दिन वृद्ध अवश्य होगा । वृद्धावस्था हर व्यक्ति को आती है और हर व्यक्ति मृत्यु को प्राप्त होता है ।"

राजकुमार सिद्धार्थ सोचने लगे कि मनुष्य यह जानते हुए भी कि उसे ऐसी दशा को प्राप्त होना है फिर भी कितने स्वार्थपूर्ण कार्य करता है ।

सिद्धार्थ का रथ आगे बढ़ता जा रहा था । वह कुछ दूर और आगे पहुँचे तो उन्होंने कुछ व्यक्तियों को एक अर्थी ले जाते देखा । सिद्धार्थ ने सारथी से पूछा, "ये लोग क्या ले जा रहे हैं सारथी ?"

सारथी बोला, "राजकुमार ! यह लोग किसी मृतक के शव को उठाकर ले जा रहे हैं । यह व्यक्ति मृत्यु को प्राप्त हो चुका है ।"

"ये लोग इसे कहाँ ले जा रहे है ?" सिद्धार्थ ने पूछा ।

"ये लोग इसे श्मशान भूमि में ले जाकर इसका दाहकर्म संस्कार करेंगे । मनुष्य की यही अन्तिम गति

हैं। प्रत्येक व्यक्ति को मृत्यु के पश्चात् इसी प्रकार श्मशान भूमि में लेजाकर जला दिया जाता है।" सारथी नें उत्तर दिया।

यह सुनकर सिद्धार्थ भयभीत हो उठे। वह सारथी से बोले, "सारथी! मेरा रथ वापस ले चलो। तुम मुझे तुरन्त मेरे महल में पहुँचा दो।"

सारथी ने आज्ञा का पालन किया। उसने सिद्धार्थ का रथ वहीं से लौटा दिया और ले जाकर महल के सामने खड़ा कर दिया।

सिद्धार्थ रथ से उतरकर अपने महल में चले गए। वह इस समय चिन्ता-निमग्न थे।

इस घटना का सिद्धार्थ के जीवन पर बहुत गंभीर प्रभाव पड़ा। उनका जीवन और भी गम्भीर हो गया। उनके अन्दर वैराग्य की भावना हिलोरें मारने लगी। उन्हें संसार निस्सार दिखाई देने लगा। ये महल, ये राज्य, ये सुख-सामग्री उन्हें व्यर्थ प्रतीत होने लगे। संसार की निस्सारता का नग्न रूप उनके सामने आ गया। वह अब इन संसार के कष्टों से मुक्ति का मार्ग खोजने लगे। संसार के कष्टों में उनकी आत्मा छटपटाने लगी।

: ४ :

गृह-त्याग

राजा शुद्धोदन ने सिद्धार्थ की यह दशा देखी तो वह भी बहुत दुखी रहने लगे। उन्हें महात्मा की वह बात याद आ रही थी जो उन्होंने कहा था कि सिद्धार्थ एक विश्व-विख्यात महात्मा बन सकता है। उन्हें सिद्धार्थ के जीवन में महान् सम्राट बनने के लक्षणों की अपेक्षा योगी महात्मा बनने के लक्षण अधिक स्पष्ट दिखाई दे रहे थे।

महाराज शुद्धोदन ने सिद्धार्थ की वैराग्यपूर्ण प्रवृत्तियों को रोकने के जितने भी प्रयास अब तक किये थे वे निष्फल सिद्ध हो चुके थे। सिद्धार्थ पर किसी चीज़ का कोई प्रभाव दिखाई नहीं दे रहा था।

अन्त में महाराज शुद्धोदन ने सोचा कि सिद्धार्थ को विवाह के बंधन में बाँधकर उसकी वै...

प्रशंसा करती थी ।

महाराज शुद्धोदन के मस्तिष्क को सिद्धार्थ और यशोधरा के प्रेमपूर्ण जीवन को देखकर पर्याप्त संतोष हुआ । उन्हें कुछ ऐसा विश्वास होने लगा कि शायद अब सिद्धार्थ के जीवन की उदासीनता जाती रहेगी।

समय आगे बढ़ा और यशोधरा के गर्भ से एक पुत्र ने जन्म लिया, जिसका नाम राहुल रखा गया। राहुल के जन्म पर राज्य में उत्सव मनाया गया । सारे नगर को सजाया गया और महाराज शुद्धोदन ने यज्ञ की व्यवस्था की ।

कुछ दिन पश्चात् एक बार सिद्धार्थ अपने उद्यान में घूम रहे थे। अकस्मात् वहाँ एक साधू आया। सिद्धार्थ ने साधू के चरण छूकर उन्हें प्रणाम किया । साधू सिद्धार्थ को आशीर्वाद देकर बोला। "सिद्धार्थ ! यह संसार कष्टों की खान है। इस में रहकर कोई मनुष्य सुखी नहीं रह सकता । मनुष्य को मुक्ति प्राप्त करने का प्रयत्न करना चाहिए । मुक्ति प्राप्त करने का प्रयत्न करके ही मनु[illegible] र के कष्टों से मुक्ति प्राप्त कर सकता है । [illegible] अपना सारा जीवन इसी संसार की भीतर [illegible] र व्यतीत

कर देगा और अन्त में मृत्यु को प्राप्त होकर उसे फिर जन्म लेना होगा। इस प्रकार वह निरन्तर मरता और जन्म लेता रहेगा। उसे कभी मुक्ति प्राप्त नहीं हो सकती।"

सिद्धार्थ साधू की बात सुनकर विह्वल हो उठा। वह साधू महात्मा के चरण पकड़ कर बोला, महाराज! पिताजी चाहते हैं कि मैं युवावस्था में राज्य भार सँभालूँ। वृद्ध होने पर मुझे मुक्ति का मार्ग खोजना चाहिए। क्या पिताजी का मत आपके विचार से उचित नहीं है?"

साधू मुस्कराकर बोला, "प्रिय पुत्र! तुम्हारे पिता के इस कथन में उनकी मोह की भावना निहित है। उन्होंने पुत्र मोह में फँसकर तुमसे ऐसा करने को कहा है। यदि मनुष्य को परमानंद की प्राप्ति करनी है तो वह इसे युवावस्था में ही तपस्या करके प्राप्त कर सकता है। वृद्धावस्था में परमानन्द की प्राप्ति करना दुष्कर कार्य है। उस समय मनुष्य का शरीर दुर्बल हो जाता है। उसके अन्दर कठोर तपस्या करने की क्षमता नहीं रहती।"

सिद्धार्थ बोला, "तब मेरे लिए आपकी क्या आज्ञा

प्रवृत्तियों को रोकना चाहिए। यही उन्हें इस समय सबसे बड़ा अस्त्र प्रतीत हुआ। उन्होंने सोचा कि यदि सिद्धार्थ अपनी पत्नी और बाल बच्चों के मोह में फँस गया तो निश्चय ही इनकी वैराग्य-भावना का धीरे-धीरे लोप हो जाएगा।

एक दिन महाराज ने अपनी रानी गौमतीदेवी से कहा, "गौमती ! सिद्धार्थ हर समय खोया-खोया-सा रहता है। इसका किसी चीज़ में मन नहीं लगता। ऐसी दशा में हमें क्या करना चाहिए ?"

गौमतीदेवी बोलीं, "महाराज ! इसका एकमात्र उपाय यही है कि आप सिद्धार्थ का विवाह कर दें। कोई सुन्दर-सी लड़की खोजकर सिद्धार्थ के लिए ले आइए उससे बच्चे का मन बहल जाएगा। अकेले पड़े मनुष्य की यही दशा होती है।"

गौमतीदेवी ने अपने विचारों का साम्य होने पर महाराज ने सिद्धार्थ का तुरन्त विवाह करने का निश्चय किया और किसी सुन्दर कन्या की खोज करने के लिए अपने मन्त्रियों को आदेश दिया।

इस कार्य में अधिक विलम्ब न हुआ। मन्त्रियों ने एक सुन्दर और सुशील राजकुमारी की खोज की

महाराज शुद्धोदन ने तुरन्त सिद्धार्थ का विवाह रचा दिया ।

यशोधरा सिद्धार्थ के राजमहल में आई तो सारा महल उसके रूप जगमगा उठा । उसके रूप सौंदर्य ने सभी को प्रभावित किया । यशोधरा की दृष्टि अपने पति सिद्धार्थ पर पड़ी तो उसकी आत्मा भी मुग्ध हो उठी । साक्षात् देवता स्वरूप पति उसे प्राप्त हुआ था । सिद्धार्थ के रूप की भी दूर-दूर तक चर्चा थी ।

यशोधरा ने हर प्रकार से अपने पति को मुग्ध करने का प्रयास किया । रूप से, गुणों से, शालीनता से, सौम्यता से, कला कौशल से । यह सभी कुछ उसके पास था । वह सर्व गुणसम्पन्न थी । विधाताने उसे विशेष गुण-युक्त करके भेजा था ।

राजकुमार सिद्धार्थ यशोधरा से प्रभावित अवश्य हुए परन्तु संसार के कष्टों से मुक्ति प्राप्त करने का उपाय वह निरन्तर सोचते रहे ।

सिद्धार्थ घोड़े की सवारी में बहुत दक्ष थे । कहते हैं राज्य भर में कपिलवस्तु में आपसे अच्छा कोई घुड़सवार नहीं था । आपके गुणों को देखकर कपिल-वस्तु की प्रजा रीझ उठी थी । वह उनके गुणों की

प्रशंसा करती थी ।

महाराज शुद्धोदन के मस्तिष्क को सिद्धार्थ और यशोधरा के प्रेमपूर्ण जीवन को देखकर पर्याप्त संतोष हुआ । उन्हें कुछ ऐसा विश्वास होने लगा कि शायद अब सिद्धार्थ के जीवन की उदासीनता जाती रहेगी ।

समय आगे बढ़ा और यशोधरा के गर्भ से एक पुत्र ने जन्म लिया, जिसका नाम राहुल रखा गया । राहुल के जन्म पर राज्य में उत्सव मनाया गया । सारे नगर को सजाया गया और महाराज शुद्धोदन ने यज्ञ की व्यवस्था की ।

कुछ दिन पश्चात् एक बार सिद्धार्थ अपने उद्यान में घूम रहे थे । अकस्मात् वहाँ एक साधू आया । सिद्धार्थ ने साधू के चरण छूकर उन्हें प्रणाम किया । साधू सिद्धार्थ को आशीर्वाद देकर बोला । "सिद्धार्थ ! यह संसार कष्टों की खान है। इस में रहकर कोई मनुष्य सुखी नहीं रह सकता । मनुष्य को मुक्ति प्राप्त करने का प्रयत्न करना चाहिए । मुक्ति प्राप्त करने का प्रयत्न करके ही मनुष्य संसार के कष्टों से मुक्ति प्राप्त कर सकता है । अन्यथा वह अपना सारा जीवन इसी संसार की कीचड़ में फंसे रहकर व्यतीत

कर देगा और अन्त में मृत्यु को प्राप्त होकर उसे फिर जन्म लेना होगा। इस प्रकार वह निरन्तर मरता और जन्म लेता रहेगा। उसे कभी मुक्ति प्राप्त नहीं हो सकती।"

सिद्धार्थ साधू की बात सुनकर विह्वल हो उठा ! वह साधू महात्मा के चरण पकड़ कर बोला, महाराज ! पिताजी चाहते है कि मैं युवावस्था में राज्य भार सँभालूँ। वृद्ध होने पर मुझे मुक्ति का मार्ग खोजना चाहिए। क्या पिताजी का मत आपके विचार से उचित नहीं है ?"

साधू मुस्कराकर बोला, "प्रिय पुत्र ! तुम्हारे पिता के इस कथन में उनकी मोह की भावना निहित है। उन्होंने पुत्र मोह में फँसकर तुमसे ऐसा करने को कहा है। यदि मनुष्य को परमानंद की प्राप्ति करनी है तो वह इसे युवावस्था में ही तपस्या करके प्राप्त कर सकता है। वृद्धावस्था में परमानन्द की प्राप्ति करना दुष्कर कार्य है। उस समय मनुष्य का शरीर दुर्बल हो जाता है। उसके अन्दर कठोर तपस्या करने की क्षमता नहीं रहती।"

सिद्धार्थ बोला, "तब मेरे लिए आपकी क्या आज्ञा

है महाराज ?"

"तुम्हें अपने जीवन का यह मूल्यवान समय नष्ट नहीं करना चाहिए सिद्धार्थ ! तुम्हें अपने लक्ष्य की प्राप्ति के लिए पूर्ण दत्तचित्तता से जुट जाना चाहिए। इसी में तुम्हारा हित है।" इतना कहकर वह साधू चला गया। सिद्धार्थ ने फिर इधर-उधर उसकी बहुत खोज की परन्तु उसका कहीं पता न चला।

राजकुमार उद्यान से सीधा अपने पिता के पास गया। उन्होंने घर छोड़ने का अपने मन में निश्चय कर लिया था। वह अपने पिता से बोला, "पिताजी ! मेरा आपसे बहुत ही विनम्र निवेदन है कि मैं सन्यास ग्रहण कर मुक्ति की खोज करना चाहता हूँ। गृहस्थ में रहकर मैं मुक्ति की खोज नहीं कर सकता। आप मुझे सप्रेम आज्ञा दें जिससे मैं अपनी आत्मा की पुष्टि कर सकूँ।"

महाराज शुद्धोधन सिद्धार्थ की बात सुनकर आश्चर्य और चिन्ता में डूब गए। कुछ क्षण तो उनके मुख से एक शब्द भी न निकला और वह डबडबाए नेत्रों से सिद्धार्थ के मुख पर देखते रहे। फिर उन्होंने भाँति-भाँति के तर्क देकर सिद्धार्थ को समझाने का

प्रयास किया परन्तु सिद्धार्थ की कुछ समझ में न आया। वह अपने मार्ग पर अडिग था। उसने जो निश्चय अपने मन में कर लिया था उससे उसे कोई नहीं डिगा सकता था।

संध्या समय सिद्धार्थ महल में पहुँचे। यशोधरा ने देखा राजकुमार उदास थे। उसने पूछा, "जीवन धन! आज आप इतने चिंतित और उदास क्यों हैं? आज आपके जीवन में किस ऐसी चिंता ने प्रवेश किया है जिसने आप का चित इतना व्याकुल कर दिया।"

राजकुमार सिद्धार्थ गम्भीर वाणी में बोले, "यशोधरा यह संसार दुःखों का सागर है। मनुष्य इस में डूबा हुआ है। मैं भी इसमें डूबता जा रहा हूँ मेरी इच्छा है कि मैं इस सागर को तैरकरपार करूँ।"

"इसके लिए आपको क्या करना होगा प्राण-नाथ?" यशोधरा ने भयभीत स्वर से पूछा।

सिद्धार्थ इतनी गम्भीरता पूर्वक बोले, "इसके लिए मुझे गृह त्याग करना होगा यशोधरा!"

"तब क्या आप मुझे और राहुल को भी छोड़ जाएँगे?" यशोधरा ने लड़खड़ाती वाणी में पूछा।

"मुझे यही करना होगा यशोधरा।" सिद्धार्थ उतनी ही गम्भीरतापूर्वक बोले।

सिद्धार्थ का यह वाक्य सुनकर यशोधरा अचेत होकर भूमि पर गिर पड़ी। सिद्धार्थ ने यशोधरा को उठाकर पलँग पर लिटाया।

महल के चारों ओर रात्रि का अन्धकार छा गया। यशोधरा अचेतावस्था में पलंग पर पड़ी थी। वह स्वप्न देख रही थी। उसने स्वप्न में ही कहा, "तुम जा रहे हो प्राणनाथ? अपने राहुल को भी छोड़कर जा रहे हो।"

सिद्धार्थ के हृदय पर गहरा आघात हुआ वह पास ही पालने में सोते राहुल हुए की ओर बढ़े परन्तु तभी उसने देखा कि उसके सामने खड़ा वह साधु कह रहा था, "सिद्धार्थ! मोह का परित्याग करो। मुक्ति प्राप्त करना चाहते हो तो संसार की प्रत्येक वस्तु का मोह त्याग दो।"

सिद्धार्थ के राहुल की ओर बढ़ते कदम रुक गए। उसने एक बार यशोधरा और राहुल की ओर देखा और फिर उस साधु की ओर। वह धीरे-धीरे साथ

पड़ा और पर्याप्त दूर तक दोनों इसी प्रकार रात्रि में आगे बढ़ते गए। अन्त में वह साधू सिद्धार्थ की दृष्टि से ओझल हो गया।

राजकुमार सिद्धार्थ ने २६ वर्ष की आयु में गृह-त्याग दिया। गृह त्याग कर वह घोर वन में तपस्या के लिए गए।

शुद्धोदन ने बहुत प्रयत्न किया कि सिद्धार्थ घर वापस लौट आयें परन्तु सिद्धार्थ ने स्वीकार न किया। वह घोर तपस्या में लीन हो गए।

: ५ :

साधना के पथ पर

सिद्धार्थ घोर वन पार करके राजगृह नगर में पहुँचे। इस नगर के बाहर कुछ गुफाएँ थीं। ये गुफाएँ आपकी तपस्या के लिए सुन्दर स्थान प्रतीत हुआ। आपने इसी स्थान पर आसन लगा लिया।

प्रात: काल आप नगर में जाकर भिक्षा कर लाते थे। और फिर सारा दिन गुफा में बैठकर तपस्या करते थे। सिद्धार्थ जब नगर में भिक्षा करने जाते थे। तो नगरवासी आपके सुन्दर रूप को निहारते रह जाते थे। सिद्धार्थ को यदि एक ही स्थान पर अपना दिन भर का आहार प्राप्त हो जाता था तो आप वहीं से लौट कर अपनी गुफा में चले जाते थे।

धीरे-धीरे सिद्धार्थ के तपस्या करने का समाचार वहां के राजा बिम्बसार को प्राप्त हुआ। वह सिद्धार्थ

से भेंट करने के लिए उनकी गुफा पर पहुँचा और उनसे बोला, "सिद्धार्थ ! तुम यह सब क्या कर रहे हो ? तुम अपने पथ से विमुख हो गये हो। तुम्हारा कर्त्तव्य था कि तुम एक वीर प्रजापालक शासक बनते। अपने राज्य की उन्नति करते। उन सबको निराशा के गढ़े में धकेलकर तुम जो कुछ करने निकले हो, इससे क्या तुम्हारी आत्मा को शान्ति प्राप्त होगी ?"

सिद्धार्थ ने बिम्बसार की बात सुनकर गम्भीरतापूर्वक उत्तर दिया, "राजन् ! आपकी सद्भावना का मैं हृदय से आदर करता हूँ परन्तु मैं संसार के इस मायाजाल से अपना सम्बन्ध विच्छेद कर चुका हूँ। मैं परमानन्द के पथ पर अग्रसर हो रहा हूँ। उसी की खोज में मैंने घर-बार का परित्याग किया है। मैं अब घर वापस नहीं लौट सकता।"

सिद्धार्थ की बात सुनकर बिम्बसार को बहुत कष्ट हुआ। वह बोले, "सिद्धार्थ ! तुम मेरा कहा मानो। तपस्या के लिए वन न जाओ। इसमें तुम्हें बहुत कष्ट सहन करना पड़ेगा। यदि तुम अपना निश्चय बदल दो तो मैं तुम्हें अपना आधा राज्य दे

सकता हूँ ।"

सिद्धार्थ मुस्कराकर बोले, "राजन् ! विश्व का कोई भी प्रयोजन मुझे मेरे लक्ष्य से विमुख नहीं कर सकता । मुझे परमानन्द की प्राप्ति करनी है और मैं उसे प्राप्त करके ही शान्ति प्राप्त कर सकता हूँ। इससे पूर्व मेरी आत्मा को शान्ति न होगी ।"

सिद्धार्थ अपने लक्ष्य की प्राप्ति के लिए एक सच्चे गुरु की खोज में थे । आपने आकाड़कालाम का नाम सुना था । यह अपने समय के विद्वान् आचार्य थे। आपके लगभग तीन सौ शिष्य थे । आप वहाँ से सीधे आकाड़कालाम के आश्रम में पहुँचे और उनके निकट रहकर मुक्ति-पथ की साधना की परन्तु आपको संतुष्टि न हो सकी । आपकी आत्मा की जिज्ञासा न मिटी ।

वहाँ से आप रुद्रकाचार्य के आश्रम पर गए। यह भी उस समय के माने हुए आचार्य थे । इनके लगभग पाँच सौ शिष्य थे । कुछ दिन तक आपने उनके आश्रम पर रहकर साधना की परन्तु जिज्ञासा आपकी वहाँ भी शान्ति न हुई । अन्त में आपको वह स्थान भी छोड़ देना पड़ा ।

सिद्धार्थ रुद्रकाचार्य के आश्रम से चलकर विभिन्न

स्थानों पर गए और स्वतन्त्र रूप से आनन्द की खोज करते रहे। इस बीच आपने घोर तपस्या की। आप जब रुद्रकाचार्य के आश्रम से चले थे तो उनके पाँच शिष्य भी आपके जीवन की जिज्ञासा से प्रभावित होकर आपके साथ चल पड़े थे।

आपने जंगलों में आगे बढ़कर एक बरसाती नदी के किनारे एक एकान्त स्थान देखा और उसके किनारे पर बैठकर तपस्या आरम्भ की। धीरे-धीरे आपने भोजन का परित्याग करना आरम्भ कर दिया और इस दशा को प्राप्त हो गए कि आपके बदन में चलने फिरने की शक्ति भी शेष न रह गई। अब आप खड़े भी न हो सकते थे।

इस प्रकार की कठोर तपस्या आपने निरन्तर छः वर्ष तक की। आपका शरीर सूखकर काँटा हो गया। परन्तु जिस आनन्द की खोज में आप निकले थे वह आपको प्राप्त न हुआ। तब सिद्धार्थ के मन में यह भाव जाग्रत हुआ कि शरीर को कष्ट देने वाली तपस्या व्यर्थ है। इससे कोई लाभ होने की आशा नहीं है और न ही इससे आत्मा को शांति प्राप्त हो सकती है। यह विचार मन में आते ही आपने फिर खाना-

पीना आरम्भ कर दिया ।

सिद्धार्थ का यह परिवर्तन रुद्रकाचार्य के आश्रम से उनके साथ आने वाले पाँच शिष्यों को रुचिकर प्रतीत न हुआ । उनका विचार बना कि सिद्धार्थ घोर तपस्या से भयभीत होकर साधना पथ से गिर गया । इससे सिद्धार्थ में उनकी आस्था कम हो गई । उन्होंने वहीं से सिद्धार्थ का साथ छोड़ दिया और वे उनसे पृथक हो गये ।

सिद्धार्थ अब अकेले ही उस एकाँत स्थान को छोड़ कर वहाँ से चल पड़े । वहाँ से चलकर आप सेनानी ग्राम के निकट पहुँचे और एक वोधि वृक्ष के नीचे आपने अपना आसन लगाया ।

स्थान बहुत सुन्दर था । प्राकृतिक सौन्दर्य चारों दिशाओं में बिखरा हुआ था । सिद्धार्थ उस प्राकृतिक सौन्दर्य को देखकर आनन्द लाभ कर रहे थे ।

सिद्धार्थ के वहाँ आने की चर्चा सेनानी ग्राम में फैल गई थी । ग्रामवासी उनके आहार के लिए सामग्री उनके पास स्वयं आकर दे जाते थे ।

एक दिन वहाँ के सेठ की पुत्री सुजाता सोने के थाल में खीर लेकर सिद्धार्थ के पास पहुँची और आदर

भाव से उसने सिद्धार्थ को खीर भेंट की। उस खीर को खाते ही उन्होंने अपने अन्दर शक्ति का अनुभव किया। उन्हें उसे खाकर स्वास्थ्य लाभ हुआ और नेत्र खुल गए।

सिद्धार्थ की आत्मा को कुछ शान्ति मिली और उन्हें ज्ञान प्राप्त हुआ। उन्होंने प्रण किया कि वह उस स्थान का उस समय तक त्याग नहीं करेंगे जब तक उन्हें दुर्लभ ज्ञान की प्राप्ति न होगी।

सिद्धार्थ अब नित्य नियम से भोजन करने लगे। उन्होंने अपनी शरीर-रक्षा पर पूरा-पूरा ध्यान दिया। शरीर को सुखा डालने से ज्ञान-प्राप्ति में कोई लाभ होता है, यह बात उनके मस्तिष्क से निकल गई। हठयोग की इस धारा के प्रति उनके मन में अरुचि पैदा हो गई। उनका अब यह दृढ़ विश्वास हो गया था कि आनन्द की प्राप्ति के लिए यह मार्ग उचित नहीं है। यहीं से आपने तपस्या से अपना सम्बन्ध विच्छेद कर लिया।

अब आपने मन की शुद्धि पर ही विशेष ध्यान दिया और उसी की साधना की। त्याग और तपस्या उनकी चरम सीमा तक पहुँच चुके थे। उनकी आत्मा

परम शुद्धि को प्राप्त हो चुकी थी। एक दिन अचानक ही उन्होंने अपनी आत्मा में परमानन्द की प्राप्ति की। उन्हें उस समय वह आनन्द प्राप्त हुआ जिसकी वह कल्पना कर रहे थे। उन्हें लगा जैसे उनके जन्म-जन्मान्तर के कष्टों का निवारण हो गया। जो ज्ञान बड़े-बड़े ऋषि प्राप्त न कर सके वह उन्हें प्राप्त हुआ। उनके मन का सब संशय जाता रहा। उनका हृदय-कुसुम खिल गया। अब उन्हें कोई कष्ट न रहा। वह संसार के जल में अब कमल के समान खिले हुए थे, निर्लिप्त।

राजकुमार सिद्धार्थ का गत जीवन समाप्त हुआ। अब वह राजकुमार सिद्धार्थ नहीं थे। अब वह विश्व द्वारा वन्दनीय गौतम बुद्ध थे। वह गौतम बुद्ध जिनके प्रकाश का सूर्य न केवल भारत वरन् संपूर्ण विश्व के भौतिक धरातल पर प्रकाशमान हो उठा, जिसने अपने समय के चारों दिशाओं में फैले अन्धकार को चीरकर उसमें अपने प्रकाश की किरणें उडेल दीं।

गौतम बुद्ध के मन की शान्ति केवल स्वयं की आत्मिक आनन्द की प्राप्ति करके प्राप्त नहीं हुई।

उन्होंने अब सम्पूर्ण संसार को आनन्द प्राप्ति का सच्चा मार्ग दिखाने की दशा में कदम बढ़ाया ।

गौतम बुद्ध वहाँ से चलकर ऋषिपत्तन नामक स्थान पर गए । वहाँ उनके वे पाँच साथी तपस्या कर रहे थे जो रुद्रकाचार्य के आश्रम से उनके साथ आये थे और फिर उन्हें पथभ्रष्ट समझकर उनसे पृथक् हो गये थे । गौतम बुद्ध ने उन्हें उपदेश दिया । वे गौतम बुद्ध के प्रवचन से इतने प्रभावित हुए कि इनके चरण पकड़कर शिष्य बन गए ।

यह वही स्थान था जहां बाद में महाराज अशोक ने सारनाथ स्तूप की स्थापना की ।

गौतम बुद्ध ने अब बौद्ध-धर्म का प्रचार करना आरम्भ किया । ये पांच शिष्य बौद्धधर्म के आधार-स्तम्भ बने ।

: ६ :

बौद्ध धर्म का प्रसार

गौतम बुद्ध ऋषिपत्तन से अपने पांच शिष्यों को साथ लेकर बिम्बसार की राजधानी राजगृह पहुँचे। भगवान बुद्ध के अपनी राजधानी में पधारने का समाचार प्राप्त कर महाराज बिम्बसार अपने मंत्रियों को अपने साथ लेकर आपकी सेवा में पधारे। वहां जाकर आपने देखा कि केवल उनके अपने नगर के ही नहीं वरन् आस-पास के ग्रामों के निवासियों की भीड़ भी भगवान बुद्ध के दर्शनार्थ उमड़ी पड़ रही थी।

भगवान बुद्ध ने अपने पास आने वालों को उपदेश दिया। आपने अपने उपदेशों में शरीर को पीड़ा देने वाली तपस्या और भोग-विलासी जीवन, दोनों की निन्दा की। आपने अपने भक्तों को मध्य मार्ग अपनाने का उपदेश दिया। इसी को आपने मुक्ति का

सच्चा मार्ग बताया ।

भगवान् बुद्ध ने बुरे कामों को त्यागने और अच्छे कामों को अपनाने पर वल दिया । हिंसा, छल, कपट और अनावश्यक चतुराई की आपने निन्दा की । इसके विपरीत अहिंसा, निष्कपटता, पवित्रता, सादगी और संयम की प्रशंसा की । आपने प्राणिमात्र की सेवा और उनसे प्रेम करने पर वल दिया । आपने बताया कि जैसे माता-पिता अपनी सन्तान की रक्षा करते हैं उसी प्रकार मनुष्यों को अपने धर्म की रक्षा करनी चाहिए ।

भगवान् बुद्ध के सदुपदेशों ने श्रोताओं के हृदयों में भक्ति का संचार किया । महाराज विम्बसार उनके प्रवचन सुनकर गद्गद् हो उठे । वह प्रथम भेंट में ही उनके शिष्य बन गए । आपने अपना 'वेणुवन' नामक उद्यान भगवान् बुद्ध को भेंट स्वरूप प्रदान किया ।

राज-गृह में भगवान् बुद्ध के प्रवचनों को सुनकर अनेकों लोग बौद्ध धर्मावलम्बी बन गए । यहाँ आपने बहुत से शिष्यों को शिक्षा दी । उन सबने बौद्ध धर्म के प्रचार का आजीवन पालन किया ।

बौद्ध धर्म का प्रसार दिन-प्रति-दिन व्यापक होने

लगा। भगवान् बुद्ध के शिष्य बौद्ध धर्म के प्रचार में संलग्न हुए। भगवान् बुद्ध ने अपने शिष्यों को आदेश दिया, "शिष्यो! मैं सब जगह नहीं जा सकता। हर व्यक्ति से मिलना भी मेरे लिए कठिन है। इस धर्म को जन-जन तक पहुँचाना आप सबका कार्य है। आप लोगों को बौद्ध धर्म के भिक्षुक बनकर देश-देशान्तरों को प्रस्थान करना चाहिए। आपको मानव-जाति के लिए अनथक परिश्रम करना होगा।

तुम्हें अपने हृदयों में अपार दया का सागर भर कर जाना होगा। तुम्हें काम, क्रोध, लोभ, मोह का परित्याग करके विशुद्ध अहिंसा का व्रत लेना होगा। तभी तुम अपने लक्ष्य की प्राप्ति में सफलता प्राप्त कर सकोगे।"

बौद्ध भिक्षुओं ने अहिंसा व्रत धारण कर चारों दिशाओं में प्रस्थान किया। वे केवल भारत की सीमाओं तक ही सीमित न रहे वरन् चीन, जापान, बर्मा, अफगानिस्तान, तिब्बत, सीलोन, इन्डोनेशिया देशों में बौद्ध धर्म का प्रचार करने के लिए गए।

अनाथपिंडक नामक एक बहुत धनाढ्य व्यक्ति उन दिनों राज-गृह में आया हुआ था। वह अतिथि [illegible]

दानी और दीन दुखियों की सेवा करने वाला था। उसके दान देने की ख्याति देश व्यापी थी। वह भी भगवान् की ख्याति सुनकर उनके दर्शन करने के लिये उनके पास गया।

भगवान् बुद्ध ने उसे उपदेश देते हुए कहा, "दानी पुरुष ! यह संसार असार है। इसकी सारता धर्म है। यह धर्म की नींव पर आधारित है। यदि धर्म नष्ट हो जाए तो यह संसार एक क्षण के अन्दर विनाश को प्राप्त हो जाए। इसलिए धर्म की रक्षा ही संसार की सुरक्षा है। धर्म की रक्षा में ही आनन्द को प्राप्ति है। अधर्मी मनुष्य को वास्तविक आनन्द कभी प्राप्त नहीं हो सकता। धन-सम्पत्ति के मोह में लिप्त व्यक्ति को भी कभी शान्ति नहीं मिल सकती। यदि वह वास्तविक शाँति और आनन्द की प्राप्ति करना चाहता है तो उसे धन और सम्पत्ति मोह का परित्याग करना चाहिए। उस व्यक्ति के लिए आवश्यक है जो धन का दुरुपयोग करता है। जो व्यक्ति धन का सदुपयोग करता है उसे उससे सम्बन्ध- विच्छेद करने की आवश्य- नहीं है। तुम जितना भी परिश्रम कर सकते हो इतना परिश्रम करो और जितना भी धन कमा सकते हो

उतना धन कमाओ। परन्तु एक बात का सर्वथा ध्यान रखनाकि कहीं धन तुम्हें अपना दास न बना ले।"

अनाथपिंडक भगवान् बुद्ध से बहुत प्रभावित हुए। उन्होंने हाथ जोड़कर निवेदन किया, "भगवान! मैं कौशल प्रदेश का रहने वाला हूँ। इस समय यात्रा पर यहाँ आया हूँ। मेरी हार्दिक इच्छा है कि आप एक बार कौशल पधारें। मैं आपके लिए वहाँ एक स्थान बनवाना चाहता हूँ।"

भगवान् बुद्ध ने अनाथपिंडक को आशीर्वाद दे करके विदा किया और अपने एक विद्वान भिक्षुक को उनके साथ कौशल भेज दिया।

भगवान् बुद्ध के भेजे हुए भिक्षुक ने कौशल जाकर श्रावस्ती नगर में भगवान् बुद्ध का स्थान बनाने को जो स्थान चुना वह वहाँ के राजकुमार का महल था। राजकुमार उस स्थान को इस कार्य के लिए नहीं देना चाहता था। वह अनाथपिंडक से बोला, 'अनाथपिंडक! मैं इस स्थान को देना तो नहीं चाहता। परन्तु इसमें से जितना स्थान तुम सोनों से भर दोगे उतना स्थान मैं तुम्हें दे दूँगा।'

यह सुनकर अनाथपिंडक ने अपने कोष का द्वार खोल दिया। अनाथपिंडक के कोष में इतने रत्न थे कि राजकुमार का पूरा स्थान रत्नों से पट गया।

यह देखकर राजकुमार और भगवान बुद्ध का भिक्षुक दोनों चकित रह गए। राजकुमार ने इस धन से अपनी ओर से नगर के बाहर एक विशाल भवन बनवाया और उसे भगवान् बुद्ध को भेंट कर दिया।

अनाथपिंडक ने भी राजकुमार के महल के स्थान पर भगवान् बुद्ध के लिए एक सुन्दर भवन बनवाया। जब स्थान बनकर तैयार हो गया तो अनाथपिंडक ने भगवान बुद्ध से पधारने की प्रार्थना की।

भगवान् बुद्ध अनाथपिंडक के निमन्त्रण पर श्रावस्ती पधारे। उस दिन नगर को सजाया गया था। राजकुमार स्वयं अनाथपिंडक के साथ भगवान् बुद्ध की आगवनी के लिए गए।

भगवान बुद्ध के दर्शनों के लिए दूर-दूर से लोग लोग श्रावस्ती नगर आए। भगवान् बुद्ध जितने भी दिन वहाँ रहे उतने दिन नगर में मेला-सा लगा रहा। आपके वहाँ जाने से कौशल प्रदेश में बौद्ध धर्म का प्रसार बहुत तीव्रगति से हुआ।

श्रीवास्ती में उस विशाल भवन के अन्दर भगवान् बुद्ध ने एक विशाल आश्रम की स्थापना की। इस आश्रम में अनाथ-पिंडक ने वहुत से भिक्षुओं के निवास की व्यवस्था की।

इसी शुभ अवसर पर अनाथपिंडक और वहां के राजकुमार ने भगवान बुद्ध की शिष्यता ग्रहण की।

: ७ :

गौतम बुद्ध कपिलवस्तु में

महाराज शुद्धोदन को जब यह समाचार महाराज बिम्बसार से मिला कि विश्वविख्यात महात्मा बुद्ध कोई अन्य नहीं बल्कि उनके पुत्र सिद्धार्थ ही है तो उनके आनन्द का पारावार न रहा। वह हर्ष से फूले न समाये और उन्होंने तुरन्त अपने मंत्री द्वारा उन्हें अपनी जन्मभूमि पधारने का सन्देश भेजा।

भगवान बुद्ध अपने पिता महाराज शुद्धोदन का संदेश पाते ही तुरन्त श्रावस्ती नगर से कपिलवस्तु के लिए चल पड़े। प्रस्थान करने में एक क्षण का भी विलम्ब न किया।

महाराज शुद्धोदन ने अपने सब मन्त्रियों, गौमती-देवी और नगरवासियों के साथ नगर से आगे [illegible] भगवान बुद्ध का स्वागत किया। पिता-पुत्र

भेंट को देखकर दर्शक हर्ष से परिप्लावित हो उठे। कपिलवस्तु में आनन्द की सरिता वह चली। आनन्द का सागर उमड़ आया।

महाराज शुद्धोदन ने अपने पुत्र को भिक्षुक वेश में देखा तो उनके नेत्रों में जल भर आया। उन्हें दुखी देखकर भगवान बुद्ध मुस्कराकर बोले, "पूज्य पिता जी आपको दुखी नहीं, हर्षित होना चाहिए। आपका पुत्र किसी लौकिक साम्राज्य का स्वामी न बनकर पारलौकिक आनन्द का स्वामी बना है। उसका आदर उसकी तलवार की शक्ति पर आधारित न होकर उसकी सेवा के आधार पर है जो वह मानव मात्र की करने के लिए अग्रसर हुआ है। वह संसार को सच्चा मार्ग दिखाने के लिए अपना सर्वस्व त्याग कर भिक्षुक बना है। उसने निःस्वार्थ सेवा का व्रत लिया है। वह विश्व को अहिंसा का पाठ पढ़ाने के लिए अग्रसर हुआ है। इस बात को सोचकर आपकी आत्मा को शांति प्राप्त होगी।"

भगवान् बुद्ध की बात सुनकर महाराज शुद्धोदन आत्मज्ञान हुआ। उनकी आत्मा को आत्मिक न प्राप्त हुई। उन्होंने आगे बढ़कर भगवान बुद्ध

को अपनी छाती से लगाकर कहा, "सिद्धार्थ ! आज मैं अपने नेत्रों के समक्ष उस महात्मा की भविष्यवाणी को साकार रूप में अपने समक्ष देख रहा हूँ जिससे भयभीत होकर मैंने तुम्हें बचपन में इस मार्ग से विमुख करने का भरसक प्रयास किया, परन्तु मुझे सफलता न मिली। जो मैं तुम्हें आज अपने समक्ष देख रहा हूँ उस महात्मा ने यह उस समय कहा था जब तुम नन्हें से बालक थे और पालने में पड़े खेल रहे थे।"

उसी समय महाराज शुद्धोदन ने उस महात्मा को सामने से आते देखा। महाराज उनके समक्ष नत-मस्तक हो गए। भगवान् बुद्ध की दृष्टि उन पर पड़ी तो उन्हें पहचानने में विलम्ब न हुआ कि यह वही महात्मा था जिससे उद्यान में उनकी भेंट हुई थी और फिर उन्होंने उन्हें उनके महल में दर्शन दिए थे। भगवान् बुद्ध ने उन्हीं के पीछे-पीछे जाकर अपने महल का त्याग किया था और जो जंगल में जाकर अन्तर्ध्यान हो गये थे। भगवान् बुद्ध उनके समक्ष नत-मस्तक हो गये।

उन महात्मा को महाराज शुद्धोदन और भगवान् बुद्ध के अतिरिक्त अन्य कोई न देख सका। भगवान्

बुद्ध और महाराज शुद्धोदन के उनकी भक्ति के नेत्र बन्द होते ही वह फिर अन्तर्ध्यान हो गए।

भगवान् बुद्ध के सभी सम्बन्धियों ने आकर भगवान् बुद्ध से भेंट की। उनके सभी साथी और नगर-वासी उनसे भेंट करने आए परन्तु देवि यशोधरा के दर्शन उन्हें प्राप्त न हुए। भगवान् बुद्ध ने कई दिन तक यशोधरा की प्रतीक्षा की परन्तु सफलता प्राप्त न हुई। अन्त में उन्होंने निश्चय किया कि वह स्वयं उस देवि के दर्शन करने के लिए उनके महल में पधारेंगे

भगवान् बुद्ध ने चौथे दिन प्रातःकाल अकेले यशोधरा से भेंट करने के लिए उनके महल की ओर प्रस्थान किया। महल के द्वार पर पहुँचकर भगवान् बुद्ध एक क्षण के लिए ठिठके, कुछ विचार किया और फिर सीधे अन्दर प्रवेश कर गए। यशोधरा सादा वस्त्र पहने चटाई पर बैठी थीं। उनके बदन पर कोई आभूषण नहीं था।

यशोधरा की दृष्टि अपने पति भगवान् बुद्ध पर पड़ी तो उन्होंने सरल शालीनता से उठकर भगवान् बुद्ध के चरण छुए और अपने अश्रु-जल से उनके चरण पखारे।

जिस दिन से भगवान् बुद्ध ने गृह त्याग किया था, उसी दिन से यशोधरा ने अपने राज्य-सुख को तिलांजलि देकर सादा जीवन व्यतीत करना आरम्भ कर दिया था। वह चटाई पर सोती थी, सादा वस्त्र पहनती थीं, पत्तल पर भोजन करती थी और मिट्टी के बर्तनों में पानी पीती थीं।

यशोधरा का यह रूप देखकर भगवान् बुद्ध गद्गद् हो उठे। यशोधरा के त्यागमय जीवन को देखकर भगवान् बुद्ध बोले, "देवि ! तुम धन्य हो। तुम्हारे त्यागमय जीवन को देखकर मेरे मानस का कलुष भस्म हो गया। मेरी आत्मा को असीम शांति प्राप्त हुई। तुम्हारी यह शांति तुम्हारे जीवन की तपन को बुझा कर शांत करेगी। तुम्हारा श्रेष्ठ आचरण तुम्हारे जीवन को आनन्दमय कर देगा। अपनी इस दुर्लभ सम्पत्ति की सावधानी से रक्षा करना।"

यशोधरा ने आँखें उभार कर अपने पति के चेहरे पर देखा तो सचमुच उन्हें अनुभव हुआ कि अभी कुछ क्षण पूर्व उनके हृदय में जो ज्वाला जल रही थी, वह शान्त हो गई थी। उन्होंने अपने अन्दर असीम आनंद का अनुभव किया। उन्होंने गद्गद् स्वर में कहा,

बुद्ध और महाराज शुद्धोदन के उनकी भक्ति के नेत्र बन्द होते ही वह फिर अन्तर्ध्यान हो गए ।

भगवान् बुद्ध के सभी सम्बन्धियों ने आकर भगवान् बुद्ध से भेंट की । उनके सभी साथी और नगर-वासी उनसे भेंट करने आए परन्तु देवि यशोधरा के दर्शन उन्हें प्राप्त न हुए । भगवान् बुद्ध ने कई दिन तक यशोधरा की प्रतीक्षा की परन्तु सफलता प्राप्त न हुई । अन्त में उन्होंने निश्चय किया कि वह स्वयं उस देवि के दर्शन करने के लिए उनके महल में पधारेंगे

भगवान् बुद्ध ने चौथे दिन प्रातःकाल अकेले यशोधरा से भेंट करने के लिए उनके महल की ओर प्रस्थान किया । महल के द्वार पर पहुँचकर भगवान् बुद्ध एक क्षण के लिए ठिठके, कुछ विचार किया और फिर सीधे अन्दर प्रवेश कर गए । यशोधरा सादा वस्त्र पहने चटाई पर बैठी थीं । उनके बदन पर कोई आभूषण नहीं था ।

यशोधरा की दृष्टि अपने पति भगवान् बुद्ध पर पड़ी तो उन्होंने सरल शालीनता से उठकर भगवान् बुद्ध के चरण छुए और अपने अश्रु-जल से उनके चरण पखारे ।

जिस दिन से भगवान् बुद्ध ने गृह त्याग किया था, उसी दिन से यशोधरा ने अपने राज्य-सुख को तिलांजलि देकर सादा जीवन व्यतीत करना आरम्भ कर दिया था। वह चटाई पर सोती थी, सादा वस्त्र पहनती थी, पत्तल पर भोजन करती थी और मिट्टी के बर्तनों में पानी पीती थी।

यशोधरा का यह रूप देखकर भगवान् बुद्ध गद्‌गद् हो उठे। यशोधरा के त्यागमय जीवन को देखकर भगवान् बुद्ध बोले, "देवि! तुम धन्य हो। तुम्हारे त्यागमय जीवन को देखकर मेरे मानस का कलुष भस्म हो गया। मेरी आत्मा को असीम शांति प्राप्त हुई। तुम्हारी यह शांति तुम्हारे जीवन की तपन को बुझा कर शांत करेगी। तुम्हारा श्रेष्ठ आचरण तुम्हारे जीवन को आनन्दमय कर देगा। अपनी इस दुर्लभ सम्पत्ति की सावधानी से रक्षा करना।"

यशोधरा ने आँखें उभार कर अपने पति के चेहरे पर देखा तो सचमुच उन्हें अनुभव हुआ कि अभी कुछ क्षण पूर्व उनके हृदय में जो ज्वाला जल रही थी, वह शान्त हो गई थी। उन्होंने अपने अन्दर असीम आनंद का अनुभव किया। उन्होंने गद्‌गद् स्वर में कहा,

"आपके आनन्द में मेरे जीवन का आनंद निहित है प्राणनाथ! आपने जिस रूप में आनन्द का अनुभव किया, मैंने उसी को अपने जीवन का आनन्द मान लिया। भविष्य के लिये आप जो आज्ञा कर रहे हैं उसी में मेरे जीवन का आनन्द निहित रहेगा।"

भगवान् बुद्ध महल से चलकर उद्यान में आये। बहुत से लोगों ने आपसे दीक्षा ली। बहुत से लोगों ने भिक्षुक बनकर बौद्ध धर्म के प्रचारार्थ अपना जीवन अर्पित किया। आपके अपने परिवार के भी कई लोग भिक्षुक बने। राहुल और देवव्रत ने बौद्ध धर्म अंगीकार किया। यशोधरा और गौमतीदेवी ने भी भगवान् बुद्ध से दीक्षा ली।

पाँचवें-दिन भगवान् बुद्ध ने कपिलवस्तु से प्रस्थान किया।

कपिलवस्तु से पर्याप्त दूरी पर पहुँच जाने पर डाकुओं के दल ने भगवान् बुद्ध और उनके साथी भिक्षुओं पर आक्रमण किया। बौद्ध भिक्षुओं ने क्योंकि उनका कोई विरोध न किया इसलिये उन सबको उन्होंने पकड़ लिया।

उन डाकुओं का सरदार अंगुलिमाल था। [illegible]

अपने उस इलाके का बहुत कुख्यात डाकू था। वह जिसे भी पकड़ता था उसकी दो अंगुलियाँ काट डालता था। वह इलाका-का-इलाका उसके आतंक से आतंकित था।

उसकी दृष्टि भगवान बुद्ध पर गई तो वह चकित रह गया। उसके मन में अनायास ही इनके प्रति श्रद्धा उमड़ आई और वह चरणों पर गिर पड़ा।

अंगुलिमाल के साथी डाकू यह दृश्य देखकर चकित रह गए।

भगवान् बुद्ध ने अंगुलिमाल को उठाया और दीक्षा देकर साधू बना दिया।

अंगुलिमाल साधू बनने के पश्चात् जब किसी नगर में भिक्षा माँगने गया तो लोगों को विश्वास न हुआ कि अंगुलिमाल भी साधू बन सकता है। उन्होंने समझा कि यह भी उसका डाका डालने की कोई चाल है।

नगरवासियों ने अंगुलिमाल पर लाठियाँ लेकर प्रहार करना आरम्भ कर दिया और बात-की-बात में उसका सारा बदन घायल कर दिया।

अंगुलिमाल अपनी यह दुर्दशा कराकर भगवान्

"'आपके आनन्द में मेरे जीवन का
प्राणनाथ ! आपने जिस रूप में आ
किया, मैंने उसी को अपने जीवन क
लिया। भविष्य के लिये आप जो आ
उसी में मेरे जीवन का आनन्द निहि

भगवान् बुद्ध महल से चलकर उ
बहुत से लोगों ने आपसे दीक्षा ली।
ने भिक्षुक बनकर बौद्ध धर्म के प्रचार
अर्पित किया। आपके अपने परिवार के
भिक्षुक बने। राहुल और देवव्रत
अंगीकार किया। यशोधरा और गौ
भगवान् बुद्ध से दीक्षा ली।

पाँचवें-दिन भगवान् बुद्ध ने कपि
किया।

दूरी पर

: ८ :

अन्तिम दिन

भगवान् बुद्ध अपने धर्म का प्रचार करते-करते अस्सी वर्ष की आयु को प्राप्त हुए। जब उनका अंतिम समय निकट आ गया तो उन्होंने अपने प्रमुख शिष्यों को बुलाकर उनसे कहा, "प्रिय भिक्षुओ! यदि तुम्हारे मन में कोई किसी प्रकार की शंका है तो तुम उसका इस समय निवारण कर सकते हो। मेरा अंत समय निकट है।"

एक भिक्षुक ने पूछा, "भगवन्! ब्राह्मण कौन है?"

"विवेकी, परोपकारी और इच्छाओं को वश में रखने वाला ज्ञानी व्यक्ति ब्राह्मण होता है। वही पूज्यनीय है।"

वुद्ध के आश्रम को लौट गया। उसकी यह दशा देख कर भगवान् वुद्ध बोले, "अंगुलिमाल! यह बहुत अच्छा हुआ। तुम्हारे वदन में पाप की कमाई का जो रक्त भरा था वह निकलकर बाहर हो गया। अब तुम्हारा वदन शुद्ध हो गया। अब तुम एक बार फिर उसी नगर में भिक्षा प्राप्त करने जाओ। इस बार फिर तुम्हें अपने बीच देख उन दुर्व्यवहार करने वालों को अपनी क्रूरता पर पश्चात्ताप होगा।"

अंगुलिमाल ने भगवान् वुद्ध की आज्ञा का पालन किया। वह फिर उसी नगर में भिक्षा मांगने गया। इस बार नागरिकों ने फिर उसे भिक्षुक वेश में देखा और उसके घावों पर उनकी दृष्टि गई तो उन्हें बहुत पश्चात्ताप हुआ। उन्होंने अंगुलिमाल से अपने कुकृत्य की क्षमा-याचना की और उसे अपने ही नगर में ठहरा कर उसकी मरहमपट्टी कराई। अंगुलिमाल जब पूर्ण स्वस्थ हो गया तब उन्होंने उसे विदा किया।

डाकू अंगुलिमाल बौद्ध धर्म का विख्यात भिक्षुक था। उसने बौद्ध धर्म के प्रचार में महत्त्वपूर्ण योग-दान दिया। वह भगवान् बुद्ध की विशेष कृपा का पात्र था।

: ८ :

अन्तिम दिन

भगवान् बुद्ध अपने धर्म का प्रचार करते-करते अस्सी वर्ष की आयु को प्राप्त हुए। जब उनका अंतिम समय निकट आ गया तो उन्होंने अपने प्रमुख शिष्यों को बुलाकर उनसे कहा, "प्रिय भिक्षुओ ! यदि तुम्हारे मन में कोई किसी प्रकार की शंका है तो तुम उसका इस समय निवारण कर सकते हो। मेरा अंत समय निकट है।"

एक भिक्षुक ने पूछा, "भगवन् ! ब्राह्मण कौन है ?"

"विवेकी, परोपकारी और इच्छाओं को वश में रखने वाला ज्ञानी व्यक्ति ब्राह्मण होता है। वही पूज्यनीय है।"

और एक वृक्ष के नीचे उनका प्राणान्त हो गया।

भगवान् बुद्ध की मृत्यु का समाचार चारों ओर फैल गया। अनेकों भिक्षुक वहाँ आकर एकत्रित हो गए।

भारतीय संस्कृति का वह दीपक शरीर से बुझ गया परन्तु उसका प्रकाश समाप्त नहीं हुआ। दीपक का प्रकाश देश के वायुमंडल में व्याप्त था, जो कालान्तर में विदेशों तक फैला और उसने जन-जीवन का मार्ग-दर्शन किया। संसार को अहिंसा शांति का संदेश देकर वह महान् आत्मा इस देश से विदा हुई।

ग्रौर एक वृक्ष के नीचे उनका प्राणान्त हो गया ।

भगवान् बुद्ध की मृत्यु का समाचार चारों ग्रोर फैल गया । ग्रनेकों भिक्षुक वहाँ ग्राकर एकत्रित हो गए।

भारतीय संस्कृति का वह दीपक शरीर से बुझ गया परन्तु उसका प्रकाश समाप्त नहीं हुग्रा । दीपक का प्रकाश देश के वायुमंडल में व्याप्त था, जो कालान्तर में विदेशों तक फैला ग्रौर उसने जन-जीवन का मार्ग-दर्शन किया । संसार को ग्रहिंसा शांति का संदेश देकर वह महान् ग्रात्मा इस देश से विदा हुई ।

दूसरे भिक्षुक ने प्रश्न किया, "भगवन् ! आपने हमें कभी कोई गुप्त मंत्र नहीं दिया। सुना है, सभी गुरुजन अपने शिष्यों को गुप्त मन्त्र देते हैं।"

"मेरे पास कोई गुप्त मन्त्र नहीं है। मेरा जो कुछ भी है वह सूर्य और चन्द्रमा के प्रकाश के समान स्पष्ट है।"

तीसरे भिक्षु ने प्रश्न किया, "भगवान् ! मृत्यु पर विजय पाने का क्या उपाय है ?"

"संसार में जिसने जन्म लिया है वह मृत्यु को अवश्य प्राप्त होगा।"

यह उपदेश देते-देते भगवान् बुद्ध के पेट में पीड़ा हुई। वह वहाँ से चलकर पावा नामक स्थान पर चंड नामक अपने भक्त ठठेरे के घर पहुँचे। उसने आपको भोजन कराया। भगवान बुद्ध के पेट में तब भी बहुत पीड़ा थी। वह वहाँ से भी चल दिये। चलते समय उन्होंने कहा, "चंड ! हमने अन्तिम बार तेरा भोजन ग्रहण किया है। तेरा महा कल्याण हो।"

पावा से भगवान् बुद्ध कुशीनगर की ओर चल पड़े परन्तु मार्ग में ही उनकी दशा बहुत खराब हो गई

श्रौर एक वृक्ष के नीचे उनका प्राणान्त हो गया।

भगवान् बुद्ध की मृत्यु का समाचार चारों श्रोर फैल गया। अनेकों भिक्षुक वहाँ आकर एकत्रित हो गए।

भारतीय संस्कृति का वह दीपक शरीर से बुझ गया परन्तु उसका प्रकाश समाप्त नहीं हुआ। दीपक का प्रकाश देश के वायुमंडल में व्याप्त था, जो कालान्तर में विदेशों तक फैला श्रौर उसने जन-जीवन का मार्ग-दर्शन किया। संसार को अहिंसा शांति का संदेश देकर वह महान् आत्मा इस देश से विदा हुई।

: ९ :

श्रद्धांजलि

गोतम बुद्ध भारत के उन महापुरुषों में से हैं जिनके नाम को कभी भुलाया नहीं जा सकता। यह उन महान् आत्माओं में से एक थे जिन्हें सम्मानित करने के लिए जनता ने उनके नाम के साथ भगवान् शब्द को जोड़ दिया।

बुद्ध भगवान् ने संसार को शान्ति का पाठ पढ़ाया और अहिंसा परम धर्म कहा। अहिंसा को कायरता कहने वाले अहिंसा का अर्थ नहीं जानते। गोतम बुद्ध जैसे निर्भीक व्यक्ति को कायर कैसे कहा जा सकता है ?

गोतम बुद्ध ने जो कुछ कहा वह प्राणीमात्र की भलाई के लिए कहा और जो कुछ किया वह प्राणी मात्र

की भलाई के लिए किया। उन्होंने संसार में मंगल की कामना की और जन-जीवन को प्राणी मात्र के साथ दया का व्यवहार करने की चेतना दी।

जिस युग में बुद्ध भगवान् ने अहिंसा की ज्योति जलाई उस समय हिंसा के काले बादल भारत के आकाश में मँडरा रहे थे। ब्राह्मण-धर्म को रूढ़ियों ने जकड़ लिया था और कर्म-काण्ड के नीचे भावना और विचार दब गए थे। इस कर्म काण्ड को लेकर जो हिंसा का देश में प्रचार हुआ, उसमें जानवरों की कौन कहे मनुष्यों तक की बलियाँ दी जाने लगीं।

इस कर्म काण्डी युग में मंदिरों के पुजारी और मठों के मठाधीश धर्म के आचार्य बन गये। इन लोगों ने अपनी गद्दियाँ बनाईं और ऐश का जीवन व्यतीत करने लगे। धीरे-धीरे यह ऐश अय्याशी, मदिरा पान और मांस भक्षण में बदल गई। देवियों पर बकरों की बलि देना, धर्म का नियम बन गया।

गौतम बुद्ध ने धर्मान्धता के इस अन्धकारपूर्ण समय से अहिंसा का दीपक जलाया और कालान्तर में उस दीपक का प्रकाश केवल भारत तक सीमित न ... देश देशान्तरों में फ़ैल गया।

देश में बौद्ध विहार खुल गये। उनमें स्त्री और पुरुष भिक्षुओं के रूप में साथ-साथ रहते थे। ये लोग सदाचारी व्यक्ति थे। इसीलिए इनका जनता पर प्रभाव होता था। इन भिक्षुओं ने जनता में अपने मत का प्रचार किया और समझाया कि हिंसा करना बुरी बात है। जो पुजारी और मठाधीश उनसे अपने मंदिरों में बलि चढ़ाने को कहते हैं, वे पाखंडी हैं। भगवान् उसे अपना अपराधी समझते हैं जो उनकी बनाई हुई वस्तु को नष्ट करता है। भगवान् ने जिस तरह मनुष्य को पैदा किया है, उसी तरह उसने बकरे को भी बनाया है।

भगवान् बुद्ध ने भारतीय जनता को जो संदेश दिया उसने एक नई विचारधारा को जन्म दिया। अहिंसा की शक्ति को जनता ने देखा। मनुष्य के हृदय की धारा कैसे अपना मार्ग बदलती है यह उस युग से स्पष्ट अन्य किसी युग ने नहीं देखा। गौतम बुद्ध के संदेश ने भारत सम्राटों और नरेशों तक को प्रभावित किया और उनकी प्रवृत्तियों को यहाँ तक बदला कि उन्होंने वर्षों से लड़े जाते युद्ध बन्द कर दिए। अहिंसा के संदेश ने उनके सामने युद्ध के विनाश

की झाँकी प्रस्तुत की और उन्होंने नर-संहार को रोका।

सम्राट अशोक यदि बुद्ध धर्म से प्रभावित न होते तो मालूम नहीं और कितने वर्ष कलिंग से जूझते रहते। अहिंसा से प्रभावित होकर सम्राट अशोक ने बुद्ध-धर्म के भिक्षुओं को देश देशान्तरों में जाने की सुविधा प्रदान की और वे लोग लंका, इन्डोनेशिया, जापान, चीन, तिब्बत, अफगानिस्तान, बिलोचिस्तान इत्यादि देशों में गए। और बौद्ध धर्म का प्रचार किया। वे लोग वहाँ की जनता में जाकर घुल मिलकर एक हो गए। उन लोगों ने भगवान् बुद्ध के संदेश को विश्व-व्यापी बनाने के लिए अपना जीवन न्यौछावर कर दिया। बुद्ध धर्म हवा की तरह उड़कर विश्व व्यापी बना और इसकी सबसे बड़ी विशेषता यह रही कि इसके भिक्षुओं ने विदेशों में जाकर कहीं शक्ति का प्रयोग नहीं किया। जिन देशों में बौद्ध धर्म फैला, वहाँ के लोगों ने उसे अपना धर्म समझकर अंगीकार किया।

बौद्ध धर्म को कुछ लोग भारत के प्राचीन आर्य धर्म से पृथक वस्तु समझने की भूल कर बैठते हैं।

असलियत यह है कि यह कोई नया धर्म नहीं है। यह भारत का वही प्राचीन धर्म था जो विश्व को युग-युग से अहिंसा का संदेश देता चला आ रहा था। कृष्ण भगवान् जैसेकर्म-योगी ने भी गीता में अहिंसा के महत्त्व कावखान किया है। उस अहिंसा में कहीं कायरता का लेश नहीं था वरन् कृष्ण भगवान् ने अर्जुन को कर्म वीर वनने का उपदेश दिया है।

हम इस पुस्तक के अन्त में अपने इस महान् संत को श्रद्धांजलि अर्पित करते हैं और उनके जीवन को आदर की दृष्टि से देखते हैं। बुद्ध भगवान् का जीवन भारतीय जनता के लिए ही नहीं विश्व के हर व्यक्ति के लिए सर्वदा अनुकरणीय रहेगा और शांति तथा अहिंसा की भावना को बढ़ावा देकर विश्व को आपसी संघर्ष से दूर रखने में सफल होगा।